RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-03
Issue-03
March-2018

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

मौखिक परम्पराओं में क्षेत्रीय इतिहास : संताल परगना को आचार्य 'पंकज' की देन

रंजन कुमार

असिस्टेंट प्रोफेसर, स्वामी श्रद्धानन्द कॉलेज, दिल्ली विश्वविधालय

इस लेख का उद्देश्य संताल परगना में 'दलित' चेतना के विकास के संदर्भ में दलित विचारकों की भूमिका के अतिरिक्त अन्य वर्गों–समूहों से संबंधित कुछ ऐसे महत्वपूर्ण व्यक्तित्वों के योगदान को रेखांकित करना है जिनके बिना इस क्षेत्र के सांस्कृतिक-इतिहास का अध्ययन पूरा नहीं हो सकता है। इस दृष्टि से एक ओर जहां दलित समूह से संबंध रखने वाले महान समाज सुधारक चामू कर्मकार और भद्र वर्ग से सबंधित परंतु, निम्न वर्ग में भी लोकप्रिय भवप्रीतानन्द ओझा तथा फूचो पांड़े जैसे महत्वपूर्ण व्यक्तित्व हमारा ध्यान आकृष्ट करते हैं तो वहीं दूसरी ओर तथाकथित भद्रवर्गीय जाति-समूह से ही संबन्धित, परंतु लगभग सभी जाति-समुदायों में समादृत प्रकांड विद्वान और बेहद लोकप्रिय शिक्षक व संताल परगना के महान साहित्यकार आचार्य ज्योतीन्द्र प्रसाद झा 'पंकज' के योगदानों और प्रभावों का अध्ययन भी हमारा अभीष्ट है। 'पंकज' जी और उनको केंद्र में रखकर उभरे एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण और प्रचंड साहित्यिक आंदोलन, जिसे 'पंकज-गोष्ठी' के नाम से जाना जाता है और जो 1955-1975 तक अपने चरमोत्कर्ष पर था की जड़ें 1938-42 के भारतीय स्वाधीनता संग्राम की हलचलों में जमी हुई थीं, का वस्तुनिष्ठ अध्ययन इतिहास के एक विद्यार्थी के रूप में हमारे लिए काफी महत्वपूर्ण हो जाता है। अत्यंत ही विषम परिस्थिति में बचपन बिताने वाले के साथ-साथ भूमिगत रहकर 1942 के भारत-छोड़ो आंदोलन में बड़ी भूमिका निभाने वाले स्वाधीनता सेनानी सह।

यह कहने की जरूरत नहीं है कि देश की एक बड़ी आबादी, जिसे आज हम 'दलित' समूह के रूप में पहचानते हैं, हजारों वर्षों से हाशिये पर खड़ी रही है और बहुत हद तक आज भी समाज की मुख्यधारा का हिसा नहीं बन पायी है। संभवतः इसलिए यह आबादी आज भी इतिहास की किसी पुस्तक का मुख्य विषय-वस्तु नहीं बन पायी है। लेकिन इसका अर्थ यह तो नहीं कि उनका कोई इतिहास ही नहीं है? बल्कि सच तो यह है कि उनका भी एक मुकम्मल इतिहास ही है जो भले ही कागज पर अपनी पहचान न बना पाया हो लेकिन जो निम्न वर्ग की अपनी मौखिक परंपरा का हिस्सा बनकर आज भी जिंदा है। बस जरूरत इस बात की है कि इतिहास के विद्यार्थियों की नज़र भी इन मौखिक परम्पराओं पर पड़े और निम्न-जाति समूह की स्मृति-आधारित इतिहास का पुनर्निर्माण हो। इतिहास की इसी नज़र से क्या 'पंकज-गोष्ठी ' जैसे साहित्यिक आंदोलनों के रुझान को समझा जा सकता है? स्वाधीनता के उपरांत का भारत कैसा हो, इसका सपना देखने वाली आँखों में उभरने वाली तसवीरों और उनकी जुबानी कहे-लिखे गए गीतों का वहाँ के जन-मानस पर पड़े प्रभाव के संदर्भ में सही पुनर्मूल्यांकन किया जा सकता है? मेरा मानना है कि ऐसा किया जा सकता है। संताल परगना के साहित्यकारों और पुरानी पीढ़ी के विद्यार्थियों की स्मृति के झरोखे से आचार्य ज्योतीन्द्र प्रसाद झा 'पंकज' और 'पंकज-गोष्ठी' की महनीय भूमिका को समझा जा सकता है।

संताल परगना के प्राचीन इतिहास और वहाँ के धर्म **तहा** संस्कृति(वैद्यनाथ कल्ट) के मूर्धन्य अध्येता तथा चर्चित इतिहासकार डॉ अमर नाथ झा ने भी 'पंकज' जी पर केन्द्रित और 'अनुसंधानिका' शोध-पत्रिका में प्रकाशित अपने एक आलेख में संताल परगना के महान व्यक्तित्वों के ऊपर गहराते जा रहे मिथकों के आवरणों से ढंके इतिहास को अनावृत करने हेतु ऐसे ही अध्ययनों की आवश्यकता की ओर इंगित करते हुए लिखा है, " विकास की दौड़ में लगातार पिछड़ते चले जाने के कारण राजनीतिक प्रक्रिया से वहाँ मोहभंग की स्थिति बन गई है। परिणामतः अगर एक तरफ नकसलवाद वहाँ अपनी जड़ें जमा रहा है तो दूसरी तरफ महेश नारायण, भाव प्रीतानन्द, दर्शन दूबे, जनार्दन मिश्र 'परमेश', बुद्धिनाथ झा 'कैरव' तथा आचार्य ज्योतीन्द्र प्रसाद झा 'पंकज' जैसे साहित्य-सेवियों की उपेक्षा को संताल परगना की उपेक्षा के साथ जोड़कर देखा जा रहा है। इसलिए इन सभी महापुरुषों के व्यक्तित्व के आस-पास रहस्य का आवरण छटने लगा है और इतिहास का मिथकीकरण होने लगा है। अतः संताल परगना के इतिहास को इन मिथकों और दंत-कथाओं के आवरण से मुक्त करके वहाँ का वास्तविक इतिहास लिखने का जरूरी काम इतिहासकारों को करना होगा।"[1] डॉ बिक्रम सिंह का भी मानना है कि किंवदंतियों तथा दंतकथाओं का भी 'पंकज' जी और उनकी गोष्ठी की लोकप्रियता में बड़ा योगदान था।[2] तो क्या दलित चेतना के विकास को ध्यान में रखते हुए ऐसी ही किंवदंतियों और दंतकथाओं को आधार बनाकर एक ऐसी परंपरा का अध्ययन नहीं हो सकता है जो सैंकड़ों वर्षों से संताल परगना, (झारखण्ड) की अनुसूचित जाति के लोगों में चली आ रही है? अतः संताल परगना की एक विशेष परंपरा जिसे वहाँ के देवघर और मधुपुर क्षेत्र की अनुसूचित जाति के वृद्ध एवं धार्मिक लोग, जिन्हें आम बोलचाल में वहां 'भगत' कहकर संबोधित किया जाता है, जन-कल्याण के लिए सैकड़ों वर्षों से दोहराते चले आ रहे हैं, का विश्लेषण करना भी हमारे लिए समीचीन होगा। ऐसे कई और समूहों का उदाहरण हमें संताल परगना में मिल सकता है जो अपने स्थानीय इतिहास को पीढ़ी-दर-पीढ़ी बचाये हुए हैं।

[1] Jha , Amarnath, Reconstructing the Ancient History of Santhal Pargana, Anushandhanika/ Vol. XII/No. I &II/ 2014/ pp. 1-9

[2] सिंह ,विक्रम , उपेक्षितोंकाकाव्यान्दोलन -'पंकज -गोष्ठी ': पूर्वपीठिकाऔरमहत्वा ;झा, अमरनाथ (संपा) , संताल परगना का इतिहास लिखा जाना बाकि है , अप्रकाशित , पृष्ठ - 108

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

वह इतिहास या ज्ञान कही न कहीं हाशिये पर है और अगर शीघ्र ही इसे संरक्षित करने का प्रयास न किया गया या फिर इससे लिखित रूप न दिया गया , तो शायद यह लुप्त भी हो जाएगा। इसलिए इस लेख का उद्देश्य आचार्य 'पंकज' और 'पंकज-गोष्ठी' के क्रियाकलापों के अध्ययन के साथ-साथ अभी तक देवघर-मधुपुर के अंचल में मौजूद अनुसूचित जन-जातीय समूह में जीवित इस परंपरा से भी लोगों को परिचित करना है ताकि इसे ऐतिहासिक तथ्य के रूप में जीवित रखा जा सके। इसे महज़ संयोग ही कहा जा सकता है कि चारू कर्मकार की तरह ही 'पंकज' जी के जीवन और योगदान से संबन्धित अधिकतर विवरण भी किंवदंतियों और दंतकथाओं का हिस्सा बन चुके हैं। इसलिए मेरा विश्वास है कि इस क्षेत्र का इतिहास भी मुख्यतः मौखिक परमपराओं और स्मृतियों पर आधारित विवरणों पर ही पुनर्निर्मित किया जा सकता है।

पश्चिम में अब मौखिक इतिहास अपनी जड़ें छोड़ता जा रहा है , लेकिन भारत में अब भी कई क्षेत्र ऐसे हैं जहां मौखिक परंपरा और जातिय समृति ही इतिहास का एकमात्र श्रोत है जिसके जरीये उन क्षेत्रों के इतिहास का ज्ञान हम अर्जीत कर सकते हैं। भारतीय सभ्यता, निरंतरता और बदलाव का एक अनूठा उदहारण है। यहाँ इतिहास की सम्पूर्ण प्रक्रिया अपने सभी रंगों के साथ तथा विभिन्न दौर के इतिहास के साथ किसी न किसी रूप में जीवित प्रतीत होती है। इसका मुख्य कारण यहाँ के इतिहासकारों के समक्ष विभिन्न मौखिक श्रोतों की उपलब्धता है जो कि लिखित श्रोतों की पूरक भी हैं परिशिष्ट भी , साथ ही कभी-कभी ये लिखित श्रोतों का विरोध भी करते हैं। परन्तु इन मौखिक श्रोतों का उपयोग अगर वैज्ञानिक और आलोचनात्मक रूप में होता रहे तो इतिहास की सुंदरता, कार्यप्रणाली और व्यापक्ता आदि की संभावना कहीं बेहतर हो जाएगी।

संताल परगना दो शब्दों के मेल से बना है, जिसमें 'संताल' भारत की एक प्रमुख जन-जाति है, तथा 'परगना ' फ़ारसी मूल का शब्द है, जिसका अर्थ जिला है। यह झारखण्ड राज्य का एक मंडल है जिसका मुख्यालय 'दुमका' है। इस समय इस प्रशासनिक मंडल में छः जिले हैं : गोड्डा, देवघर , दुमका , जामताड़ा, साहिबगंज और पाकुड़। अविभाज्य 'बिहार' राज्य में भी संताल परगना के जिलों के नाम यही थे। जहां तक इस क्षेत्र के इतिहास का सवाल है, सन १८५५ में अंग्रेजों के शासन के अंतर्गत, भारत के इस हिस्से को जिला का दर्जा मिला और बंगाल का अध्यक्षाधीन मंडल बनाया गया।[3] तब से एक भू-राजनैतिक इकाई के रूप में यह स्वतंत्र अस्तित्व में आया। परंतु इसका यह कदापि अर्थ नहीं कि इससे पहले यह क्षेत्र राजनैतिक-सामाजिक-सांस्कृतिक हलचलों से रहित था। ख्यातिलब्ध इतिहासकार डॉ सुरेन्द्र झा ने मध्यकाल में इस क्षेत्र में घटित राष्ट्रीय महत्व की घटनाओं के आधार पर यहाँ का इतिहास पुनर्निर्मित करने का प्रयास किया है। डॉ अमर नाथ झा भी इस क्षेत्र के इतिहास को कम से कम पूर्व-मध्य काल तक, लगभाग 700 ई तक का सिद्ध करने का प्रयास कराते हैं। हालांकि अमर नाथ झा के दावों को संपुष्ट करने के लिए अभी भी कुछ अकाट्य ऐतिहासिक साक्ष्यों की खोज की जरूरत है तथापि छिटपुट रूप से बहुत प्राचीन काल से ही इस भू-सांस्कृतिक क्षेत्र की चर्चा यत्र-तत्र हमें मिलती है। महाभारत ग्रन्थ में अगर इस क्षेत्र का वर्णन ढूढें, तो आधुनिक संताल परगना के उत्तरी हिस्से को 'अंग ' महाजनपद का हिस्सा बताया गया है।[4] प्राचीन साहित्यिक श्रोतों में इस क्षेत्र को 'कजंगल'[5] नाम से भी सम्बोधित किया जाता रहा है। चीनी यात्री (Xuangzang) हुवानशांग के सन्दर्भ में भी यह लिखा गया है की सातवीं शताब्दी में उन्होंने 'चम्पा'[6] से 'कजंगल' तक की यात्रा के उपरांत पुण्ड्रवर्धन[7] (बांग्लादेश) की तरफ प्रस्थान किया था। अपने यात्रा-वृतांत में इस क्षेत्र के सन्दर्भ में उन्होंने लिखा है की इस प्रान्त की उत्तरी सिमा का क्षेत्र (साहिबगंज), गंगा नदी से समीपस्थित है। दक्षिणी हिस्सों में यहाँ घने जंगल हैं जिनमें हाथियों की संख्या बहुत अधिक है। यहाँ के लोग सरल , प्रतिभावान और शिक्षा के अनुरागी हैं।[8] भारत में मौजूद लगभग सभी मानव-प्राजाति के लोगों को यहाँ देखा जा सकता है। जहा तक इस क्षेत्र की भाषा का प्रश्न है, यहाँ कई बोलियाँ और भाषाएँ बोली जाती हैं। पहाड़िया, संताली, बांग्ला, भोजपुरी, अंगिका आदि ज्यादातर जुबानें यहाँ बोली जातीं हैं। पर संताल यहाँ कि बड़ी आबादी वाली क्षेत्रीय जानजाति होने की वजह से 'संताली ' जुबान यहाँ की एक बड़ी आबादी द्वारा बोली जाती है। अतः कहा जा सकता है कि आधुनिक संताल परागना का क्षेत्र बहु-भाषी, बहु-जातीय और बहु-सांस्कृतिक क्षेत्र है।

उक्त पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए ही इस शोध का दीर्घ कलिक लक्ष्य 'संताल परगना ' क्षेत्र के अनसुने व्यक्तित्वों का अध्ययन करना भी है। चूँकि इतिहास हमेशा से शासक वर्ग एवं कुलीनतंत्र के लिए लिखा जाता रहा है, इसलिए यहाँ निचले तबकों का वर्णन नाममात्र मिलता है। इसलिए इतिहास की बेहतर समझ विकसित करने के लिए यह बेहद जरुरी है की क्षेत्रीय इतिहास लेखन पर बल दिया जाए तथा गुणात्मक अनुसन्धान के माध्यम से स्थानीय लोगों का इतिहास और ज्ञान प्राप्त किया जाए। खासकर वह स्थानीय ज्ञान जो की पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होता रहा है। परन्तु यह घोर विडम्बना है कि पश्चिम केंद्रित ज्ञान के बढ़ रहे दबदबे में क्षेत्रीय इतिहास लुप्त होता जा रहा है। अतः कहने की आवश्यकता नहीं है कि भारतीय राष्ट्रीयता की बेहतर समझ के लिए भी क्षेत्रीय या आंचलिक इतिहास का लेखन समय की मांग है। परंतु इसके लिए संबन्धित क्षेत्र की राजनीतिक-सामाजिक-सांस्कृतिक ही नहीं बल्कि वहाँ के धार्मिक और आध्यात्मिक अतीत की भी सम्यक समझ हमें होनी चाहिए।

संताल परगना के सामाजिक तथा धार्मिक दृष्टिकोण को समझने के लिए संत चरित साहित्य को एक महत्वपूर्ण श्रोत बनाया जा सकता है। इस साहित्य में हमें समाज के हाशिये पर खड़ी निम्न जातियों पर व्यापक

[3] Jha , Amarnath; Locating the Ancient History of Santhal parganas; Proceeding of the Indan History Congress, vol.70 (2009-2010) pp. 185

[4] वही ,पृष्ठ -185

[5] कजंगल, प्राचीन भारत के पूर्वी भाग में राजमहल के पास स्थित एक क्षेत्र को संदर्भित करता है

[6] चम्पा , (भागलपुर) को 'अंग' क्षेत्रकीराजधानीकहागयाहै

[7] पुण्ड्रवर्धन ,प्राचीनकाल में भारतीय महाद्वीप का एक महत्वपूर्ण साम्राज्यथा ; यह क्षेत्र उत्तर बंगाल में स्थित था

[8] Roy, Niharranjan, Banglaritihaas, Adi parba,2005, pp.81-93, Dey's Publishing, 13 Bankim Chatterjee Street, Kolkata

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

प्रभाव डालने वाली कई अंतर्धाराएँ कथानक या परंपरा के रूप में मिल सकती हैं जिनके सम्यक विवेचन से हम भारतीय उपमहाद्वीप के इस विशिष्ट भू-सांस्कृतिक क्षेत्र की परम्पराओं का ऐतिहासिक अध्ययन कर सकते हैं। यह क्षेत्र विशिष्ट इस माने में है कि प्रागैतिहासिक काल से ही यहां मानव जाति के क्रियाकलापों के अवशेष प्राप्त होते हैं। संभवतः इसीलिए अब धीरे-धीरे इतिहासकारों की नज़र भी इस क्षेत्र पर पड़ रही है और कुछ नवीन अध्ययन सामने आ रहे हैं। संताल परगना के प्राचीनतम इतिहास पर शोध करने वाले डॉ अमर नाथ झा ने अपने अध्ययनों में पाषाण-काल के तीनों काल-खंडों –-- पुरा-पाषाण काल, मध्य-पाषाण काल और नव-पाषाण काल के अवशेषों के यहाँ मौजूद होने के प्रमाण दिये हैं।[9] लेकिन डॉ अमर नाथ झा का भी मानना है कि संताल परगना के राजनीतिक-सामाजिक-सांस्कृतिक पहलुओं की गंभीर जानकारी के लिए किसी भी अध्येता को अभी भी अपनी अध्ययन-प्रक्रिया यहाँ के परिवेश में उपलब्ध मौखिक श्रोतों तथा इतिहास पर ही मुख्यतः आश्रित होना पड़ता है।[10] मौखिक इतिहास से तात्पर्य मुख्य रूप से मौखिक श्रोतों के आधार पर अतीत के पुर्ननिर्माण से है, जिसमें मौखिक परम्पराएं, लोककथाएं और व्यक्तिगत साक्षत्कार आदि शामिल किए जा सकते हैं। अगर संताल परगना की बात की जाए तो यहाँ ऐसे कई समुदाय हैं जिनका इतिहास अभी भी अनसुना है। लेकिन इसका कतई अर्थ नहीं कि उनका कोई इतिहास नहीं है। सच तो यह है कि वे अपना इतिहास मौखिक रूप में साथ लेकर चलते हैं। इनके अतीत से सम्बंधित विचार और ज्ञान को जानने के लिए लिए हमें मुख्य रूप से उन मौखिक परम्पराओं पर भरोसा करना होगा जिनका उन समुदायों ने पालन किया है।

संताल परगना के प्राचीन इतिहास पर लिखी गई पुस्तक में डॉ अमर झा ने 'वैद्यनाथ कल्ट' की अवधारणा को प्रस्थापित करते हुए संताल परगना की संस्कृति की कई अंतर्धाराओं को विश्लेषित करने का प्रयास किया है। नृतत्व-शास्त्र की अवधारणा 'ग्रेट कल्चर' और 'लिटल कल्चर' को अपने विश्लेषण का आधार बनाते हुए डॉ झा ने 'वैद्यनाथ कल्ट' में कई सामाजिक-धार्मिक उपधाराओं का समागम पाया है। इसी क्रम में उन्होने सामज की सबसे निचली सीढ़ी पर खड़ी निम्न जतियों के उपास्य देवसमूहों, उनकी पूजा-पद्धतियों और मान्यताओं का अध्ययन किया है तथा संताल परगना के धार्मिक वातावरण पर उन तत्वों के प्रभावों को भी दर्शाया है। अपने इस अध्ययन के क्रम में में डॉ अमर नाथ झा संताल परगना की एक निम्न जाति से संबन्धित एक अति महत्वपूर्ण विचारक 'चामू कर्मकार' और समाज पर उनके विशिष्ट प्रभाव का जिक्र करते हैं। एक सक्षम इतिहासकार के रूप में उन्होंने 'चामु कर्मकार' के विचारों एवं निम्न वर्ग पर उनकी विचारधारा के प्रभाव का सटीक विश्लेषण भी किया है। यहाँ मैं इस तथ्य कि ओर ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूँ कि इस क्षेत्र की निम्न जाति के लोगों के मध्य कुछ ऐसे धार्मिक गीत प्रचलित है जिनमें 'चामू' को लगभग सतरहवीं शताब्दी के प्रचारक के रूप में दर्शाया जाता है। 'चामू' का जन्म संताल परगना के मधुपुर जिले में हुआ था तथा वे वैष्णव भक्त एवं झूमर[11] साधक के रूप में यहाँ प्रचलित थे। देवघर जिले तथा संताल परगना के अन्य कई क्षेत्रों में 'चामू' आज भी धर्म-विचारक के रूप में याद किये जाते हैं। सामाजिक-धार्मिक गतिविधियों तथा अनुष्ठानों में, चाहे वो 'चौपहरा' हो या 'तेरहवीं', 'भगत'[12] गण अपने झूमर गायन में 'चामू' के विचारों तथा उनके विश्वास को गीतों और कविताओं के माध्यम से प्रचारित करते हैं। इन गीतों में भगत गण, 'चामू' के सामाजिक योगदान की प्रशंसा करते हैं तथा निम्न वर्ग के सामाजिक शोषण की भरपूर निंदा करते हैं। यहाँ सबसे दिलचस्प बात यह दिखाई देती है की, 'चामू' की विचारधारा का प्रभाव केवल निम्न वर्ग तक ही सिमित नहीं था बल्कि ऊपरी वर्गों; समाज के कुलीन ब्राह्मण जाति पर भी उनका किसी न किसी तरह का प्रभाव पड़ा था, ऐसा निर्विवाद कहा जा सकता है। ब्राह्मण जाति के चिंतकों पर भी चामू का प्रभाव पड़ा ऐसा मानने का कारण यह है कि इनके गीतों को गाने वाले समूह के लोग अक्सर अपने गीतों में 'फुचो पांड़े' और 'भवप्रीतानन्द ओझा' का भी जिक्र करते हैं। हालांकि इन तीनों विभूलियों का गायन करने वाले लोग जो प्रायः समाज के नीचले हिस्से से ताल्लुक रखते हैं इन्हें समकालीन मानते हैं, लेकिन ऐतिहासिक रूप से ऐसा मानना सही नहीं होगा। हमें 'फुचो पांड़े' के बारे में बहुत अधिक जानकारी नहीं मिलती है सिवाय इसके कि ये कान्यकुब्ज ब्राह्मण जाति से थे और इसी जाति से संबन्धित एक अन्य ऐतिहासिक पुरुष जिन्हें देवत्व की प्राप्ति हो चुकी है, और झारखंड के बहुत बड़े हिस्से में जिनकी पूजा होती है –- 'दुबे बाबा' के बाद के समय के थे। बिना किसी ठोस ऐतिहासिक साक्ष्य के हम 18वीं शताब्दी को इनका कार्यकाल मान सकते हैं, हालांकि यह गलत भी हो सकाता है। फुचो पांडे के बाद 'भवप्रीतानन्द ओझा' का कार्यकाल आता है जिनके बारे में हमें ठोस ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त है। भवप्रीतानन्द ओझा देवघर के वैद्यनाथ मंदिर के प्रधान पुजारी या सरदार पंडा थे और 19वीं शताब्दी के महान व्यक्तित्वों में इनकी परिगणना की जा सकती है। हालांकि ये जाहिरा तौर पर कर्मकांडी पंडित थे लेकिन इनपर अन्य धार्मिक विचारों के प्रभाव से इंकार नहीं किया जा सकता है। डॉ अमर नाथ झा इन्हें बंगाल के सहजिया संप्रदाय से भी प्रभावित मानते हैं। लेकिन जब हम इनके झूमर को पढ़ते हैं जो बिहार-बंगाल और झारखंड के बड़े हिस्से में गाया जाता है तो इनके धार्मिक उदार पक्ष से परिचित होते हैं। अतः इन्हें भी महत्वपूर्ण धार्मिक प्रचारक व सुधारक की श्रेणी में परिगणित किया जाता है। संभवतः अलग-अलग कालखंड के होने के बावजूद इसीलिए भगतगण के झूमर में कई बार इन तीनों को धार्मिक विमर्श में एक दूसरे का प्रतिद्वंधी के रूप में दर्शाते हैं जहाँ ये तीनों धार्मिक तथा सामाजिक पहलुओं पर एक दूसरे से सवाल जवाब करते पाये जाते हैं। भगतगण इस बहस को संगीत और नृत्य के जरिये श्रोताओं के समक्ष प्रस्तुत करते हैं और एक उन्माद उत्पन्न करने का प्रयास करते

[9] Jha , Amarnath; Locating the Ancient History of Santhal parganas; Proceeding of the Indan History Congress, vol.70 (2009-2010) pp. 185

[10] Jha , Amarnath, Reconstructing the Ancient History of Santhal Pargana, Anushandhanika/ Vol. XII/No. I &II/ 2014/ pp. 1-9

[11] संथाल परगना क्षेत्र में वैष्णव संतों द्वारा गायन एवं नृत्य की शैली

[12] भगत ,संताल परगना में चर्मकार समुदाय के धार्मिक लोग भगत के नाम से सम्बोधित किये जातेहैं , ये संत नामदेव का अनुसरण करते हैं तथा धार्मिक अनुष्ठानों में झूमर गायन प्रस्तुत करते हैं

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

हैं। शायद उनका यह प्रयास निम्न जाति के लोगो के मध्य धार्मिक पहचान और सम्मान की भावना उत्पन्न करने से जुड़ा हो।

भगतगण के इन गीतों में ,सामाजिक बुराइयों तथा धार्मिक प्रथाओं पर गंभीर काव्यात्मक बातचीत का सन्दर्भ मिलता है। उदाहरण के तौर पर एक पंक्ति में नारी के सम्मान की बात करते हुए 'चामु' कहते हैं :

नारीर निंदा ना कोरो कोखोन,ऐ पौन्डितगोन
नारीर हाथे साँसारेर जिबोन
नारीर निंदा ना कोरो कोखोन। [13]

(नारी की निंदा न करें पडितगण, नारी के ही हाथों में सांसारिक जीवन है, इसलिए नारी की निंदा कभी न करें।)

कई बार इन गीतों में 'चामू' को भगत 'नामदेव'[ii] का जिक्र करते हुए बतलाया जाता है। इनके झूमर भी 'नामदेव' के वैष्णव भक्ति से ही प्रभावित प्रतीत होते हैं। 'चामू' , 'नामदेव ' तथा उनके दर्शन के बारे में मिरयोग भरी हुई आत्मकथाएं वर्णित करते हैं , जिसमें निर्गुण और सगुण दोनों विषय मौजूद हैं। नामदेव के द्वारा किये गए एक चमत्कार का वर्णन करते हुए चामू कहते हैं:

पथला के मूर्ति पिए मुख बाये
ऊपोर से नामदेव दूध ढरकाये[14]

(जैसे ही नामदेव ने पत्थर की मूर्ति को दूध पिलाने का प्रयास किया, पत्थर ने मुख खोल लिया और नामदेव ऊपर से मुख में दूध गिराने लगे।)

फिर कई बार ऐसे प्रसंग भी आते हैं जहां 'चौपहरा' जैसे सांस्कृतिक समारोहों में घोर ब्राह्मण विरोधी 'चामू' और कर्मकांडी परंतु सुधारवादी टोन के 'भावप्रीतानन्द' के झूमरों को गाकर ही अनुष्ठान की समाप्ती होती है। इसको एक इतिहासकार के रूप में कैसे समझा जा सकता है? इस तथ्य का भली-भांति अध्ययन होना चाहिए तथा तटस्थ होकर यह समझने की कोशिश होनी चाहिए कि यह प्रक्रिया एक पक्षीय नहीं थी। अगर 'चामू' की परमपारा को 'फुचो' और 'भावप्रीतानन्द' तक आता हुआ हम देखते हैं तो यह भी देखने की जरूरत है कि 'चामू' की कट्टर ब्राह्मण विरोधी मान्यताओं के संवाहकों को भी 'फुचो' और 'भावप्रीतानन्द' जैसे उदारवादी ब्राह्मणवादी मान्यताएँ आकर्षित करतीं हैं और इस तरह से घृणा नहीं एक अद्भूत सम्मिश्रण की संस्कृति का विकास संताल परगना का यह अंचल करता है जो इतिहासकारों की दृष्टि से अभी तक ओझल रहा है।

संताल परगना की इसी समन्वित संस्कृति के सबसे अर्वाचीन ऐतिहासिक व्यक्तित्व के रूप में, 20वीं शताब्दी के आचार्य ज्योतीन्द्र प्रसाद झा 'पंकज' की भी समीक्षा होनी चाहिए। किंवदंतियों और दंतकथाओं से उनके बारे में जो बातें छनकर सामने आती हैं उनमें कुछ बातें इतिहासकार और समाजशास्त्री--दोनों के लिए बड़ी उपयोगी सिद्ध हो सकती है। 'पंकज' जी के कई शिष्यों और परवर्ती लेखकों ने लिखा है कि जब 'पंकज' जी पर स्वाधीनता आंदोलन का रंग चढ़ने लगा अपनी घाटवाली के मोह को त्याग दिया था और वे विद्याध्यायन के लिए देवघर हिन्दी विद्यापीठ आ गए थे। यहीं उन्होने 1934 में महात्मा गांधी के दर्शन किए और आजीवन गांधीवादी रंग में रंग गए। संभवतः इसीलिए अपने दुर्दिन में जब उन्हें आजीविका के सख्त जरूरत थी तो उन्होने म्यूनिस्पेलिटी में झाड़ू लगाने वाले पद के लिए भी आवेदन किया था। ये अलग बात थी कि जन्मना ब्राह्मण होने के कारण उन्हें यह नौकरी नहीं मिली। परंतु एक ब्राह्मण होने के बावजूद मुख्यतः उस समय की अछूत जाति का पेशा समझे जाने वाले पद के लिए उन्होनें आवेदन करने की क्रांतिकारिता कहाँ से प्राप्त की? इसका उत्तर उनपर गांधी जी के प्रभाव के रूप में दर्शाया जा सकता है। लेकिन क्या इसे सिर्फ गांधी का प्रभाव ही माना जाए या कुछ और? अगर उनके परवर्ती जीवन की कुछ अन्य घटनाओं को इससे मिलाकर उनका मूल्यांकन करें तो सोच की दिशा बदल भी सकती है। कहा ये जाता है कि भागलपुर में शिक्षा अर्जित करने के दौर में उन्होने कुछ दिन ईसाई क़बरगाह में अकेले रहकर गुजारे थे। यह क्या था? ज्ञात सूचनाओं के अनुसार वे किसी तरह की तंत्र क्रिया के अनुयायी नहीं थे। परंतु फिर भी उन्हें क़बरगाह की भयावह खामोशी में दो-चार रात बिताने से गुरेज नहीं हुआ। आखिर ऐसा दुस्साहस करने की शक्ति उन्हें कहाँ से मिली? या उनके लिए यह एकदम सहज बात थी, ठीक उसी तरह से जैसे कि हम मध्यकालीन संतों के जीवन से संबन्धित विभिन्न कथानकों और दंतकथाओं को पाते हैं? हमारा मानना है कि एक व्यक्ति और धार्मिक विचारक के के रूप में धार्मिक सहिष्णुता-सम्मिश्रण और उन्हीं उदारवादी मूल्यों के वे पक्षधर थे जिनकी धारा संताल परगना में कम से कम 17वीं शताब्दी से ही विकसित हो रही थे। अतः चामू, फुचो, भवप्रीतानन्द और पंकज को हम संताल परगना के सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलन की एक ऐसी धारावाहिक कड़ी के रूप में देख सकते हैं जिंहोने संताल परगना में समता-मूलक बंधुत्व और प्रेम पर आधारित सहिष्णु-सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण किया था। उनके प्रथम काव्य-संग्रह 'स्नेह-दीप' में संकलित 'दलित कुसुम' कविता में हम इसी सामाजिक-सांस्कृतिक-सुधारवादी मूल्यों का दिग्दर्शन कर सकते हैं:

"नियति का अभिशाप हूँ मैं
विश्व का उर-दाह हूँ मैं
गरल है मुझमें प्रवाहित
जलन मय शृंगार हूँ मैं"। [15]

आगे की पंक्तियाँ और भी मार्मिक हैं जो युगों-युगों से ऐसे मानव समूह के प्रति होने वाले अमानवीय बर्ताव की ओर इशारा करती हैं:

उर चिता ले साधना की
जागती तबसे यहाँ हूँ।
मैं न यह भी जानती हूँ
कौन हूँ कब से कहाँ हूँ।

(इन पंक्तियों से भी संकेत मिलता है कि 'पंकज' जी वास्तव में भागलपुर में कुछ दिनों के लिए शमशान वासी रहे होंगे।)

[13] क्षेत्रीय गायन समूह का व्यक्तिगत साक्षात्कार , समूह में शामिल गायक तरनि भगत, कामदेव दस , अमित भगत पथोरे , मधुपुर , झारखण्ड के निवासी हैं

[14] तरनि भगत का व्यक्तिगत साक्षात्कार

[15] ज्योतिंद्र प्रसाद झा , स्नेह -दीप, उदगार और अर्पणा , संकलन और संपादन गंगा प्रसाद विमल , अमरनाथ झा , हर्ष पुब्लिकेशन्स , दिल्ली ' २०१९, pp 43 -44

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

'पंकज' जी के दूसरे काव्य-संग्रह 'उद्गार' की 'पुकार' कविता भी इन्हीं भावों के संदर्भ में विचारणीय है। कुछ पंक्तियाँ देखी जा सकती हैं:

दलित मनुजता को अपनाओ
बंधु, आज यह युग-पुकार हो
प्रेम-धाम बन जाये धरती
मनुज स्नेह का हो अनुवर्ती
उर-उर में भ्रातृत्व भाव का
आज यहाँ अभिनव प्रसार हो।
एक धरा के हम वासी हैं
एक धारा के विश्वासी हैं
एक चाँद, सूरज के नीचे
शाश्वत समता का विकास हो
दलित मनुजता को अपनाओ
बंधु आज यह युग पुकार हो।[16]

ज्योतीन्द्र प्रसाद झा 'पंकज' की ऊपर की दो कवितायें न सिर्फ 'पंकज' जी के गांधीवादी मूल्यों की उपज हैं बल्कि संताल परगना में कम से कम 17वीं शताब्दी से ही धारावाहिक रूप से चली आ रही समाज-सुधार और भक्ति आंदोलन की निरंतरता की भी परिणति है जिसके 'पंकज' जी स्वयं अभिन्न संवाहक थे। इसलिए वे धरती को 'प्रेम धाम' बनाना चाहते हैं और एक चंद सूरज के नीचे 'शाश्वत समता' का विकास चाहते हैं। यहीं यह भी उल्लेख कर देना अप्रासंगिक नहीं होगा कि हिन्दी साहित्य में 1940-50 के काल खंड में 'दलित' शब्द का प्रयोग करने वाले वे ऐसे विरले साहित्यकार हैं जिनकी इन कविताओं ने अधुनातन दलित चेतना के विकास में अद्वितीय भूमिका निभाई होगी।

यहीं हम यह भी कहना चाहेंगे कि आज के भारतीय राजनीतिक पृदृश्य में बढ़ती सामाजिक असहिष्णुता और कट्टरता के बरख्श चामू, फुचो, भवप्रीतानन्द और पंकज की इस परंपरा का, जो संताल परगना की विशिष्ट पहचान है, इतिहास के विद्यार्थियों द्वारा भी गंभीर अध्ययन होना चाहिए क्योंकि ऐसे व्यक्तित्व सिर्फ साहित्य या संस्कृति के नहीं बल्कि इतिहास की भी धरोहर हैं। ऐसे अध्ययनों से न सिर्फ संताल परगना बल्कि राष्ट्रीय परिदृश्य में उलझी कई गुत्थिओयों को सुलझाने में बौद्धिकों और प्रशशकों को भी मदद मिल सकती है।

परंतु अंत में हम ये भी कहना चाहेंगे कि एक इतिहासकार के लिए सबसे बड़ी चुनौती यह है कि इन मौखिक श्रोतों को समझा कैसे जाए? भगत गण इन मौखिक परम्पराओं को गायन शैली में एक पात्र की भूमिका निभाते हुए प्रदर्शित करते हैं। यहाँ इतिहासकारों के लिए एक बड़ी चुनौती हो जाती है की वह उन पात्र का अध्ययन उपयुक्त रूप से करे और इतिहास-लेखन में उसे शामिल भी कर सके।[17] हालाँकि ऐतिहासिक दस्तावेजों के लिए यह सूत्रीकरण बहुत ही सरल है क्यूंकि, उनके कल्पनाशील आयाम है जो कभी-कभी पूणतः काल्पनिक प्रकृति के भी प्रतीत होते हैं। यह संभव है की दर्शकों-श्रोतावों का विश्वास बढ़ने हेतु भगत गण द्वारा इन कथानकों को अतिरंजित तरीकों से प्रस्तुत किया जाता रहा है। परन्तु इस बात पर संसय नहीं की इन धार्मिक प्रदर्शनों का प्रयास देवताओं को सही ठहराते हुए शिक्षा देना है। यही नहीं ,अधिकांश विद्वान इनके उपदेशात्मक रूप और उद्देश्य के बीच कुछ महत्वपूर्ण सम्बन्ध भी पाते हैं, जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि इन मौखिक परम्पराओं का उद्देश्य सामाजिक हित तथा धार्मिक कल्याण मात्र है। अतः इतिहासकारों का उद्देश्य उन्हीं सामाजिक-धार्मिक होठों के सूत्रों के उत्खनन का होना चाहिए। इस दृष्टि से भी चामू, फुचो, भवप्रीतानन्द और पंकज के व्यक्तित्वों का अध्ययन होना चाहिए। चूंकि इस पमपरा की सशक्त और प्रभावी कड़ी के रूप में ज्योतीन्द्र प्रासाद झा 'पंकज' हमारे अपने युग के, 20वीं सदी के हैं अतः इनके जीवन वृत्त और कार्यों का वस्तुनिष्ठ ऐतिहासिक अध्ययन किया जाना अभी संभव है। ऐसा करके हम मिथकीय आवरण से बाहर निकालकर निरपेक्ष दृष्टि से इनका मूल्यांकन तो कर पाएंगे ही, संताल परगना के क्षेत्रीय और सांस्कृतिक रूप का भी वैज्ञानिन और वस्तुनिष्ठ अध्ययन प्रस्तुत कर सकेंगे

सन्दर्भ ग्रंथ सूची:

1. Sheldon Pollock, The Language of the Gods in the World of Men: Sankrit, Culture and the Power in Premodern India, Published by: Permanent Black' 2006
2. Kunal Chakrabarti, Religious Process: The Puranas and the Making of a Regional tradition, Published by: Oxford India Paperbacks' 2018
3. Kunal Chakrabarti, Anthropological Models of Cultural Interactions and the study of Religious process, Studies in istory, SAGE Journals, Vol. 8. Issue 1, Feb' 1992
4. Shashi Bhushan Dasgupta, Obscure Religious Cult, Published by: Firma K.L. Mukhopadhyay, 1962
5. ज्योतिंद्र प्रसाद झा , स्नेह -दीप, उदगार और अर्पणा , संकलन और संपादन गंगा प्रसाद विमल , अमरनाथ झा , हर्ष पुब्लिकेशन्स , दिल्ली ' २०१९
6. Roy, Niharranjan, Banglaritihaas, Adi parba, Dey's Publishing, 13 Bankim Chatterjee Street, Kolkata' 2005
7. Curley, David L., *Poetry and History,Bengali Mangal Kavyaand Social Change in precolonial Bengal,* Chronicle Books,2008
8. सिंह ,विक्रम , उपेक्षितोंकाकाव्यान्दोलन -'पंकज -गोष्ठी ': पूर्वपीठिकाऔरमहत्वा ;झा, अमरनाथ (संपा) , संतालपरगना का इतिहास लिखा जाना बाकि है , अप्रकाशित
9. Jha , Amarnath, Reconstructing the Ancient History of Santhal Pargana, Anushandhanika/ Vol. XII/No. I &II/ 2014
10. Jha , Amarnath; Locating the Ancient History of Santhal parganas; Proceeding of the Indan History Congress, vol.70 (2009-2010)

[16] ज्योतिंद्र प्रसाद झा , स्नेह -दीप, उदगार और अर्पणा , संकलन और संपादन गंगा प्रसाद विमल , अमरनाथ झा , हर्ष पुब्लिकेशन्स , दिल्ली ' २०१९, pp. 52-53

[17] Curley, David L., *Poetry and History,Bengali Mangal Kavyaand Social Change in precolonial Bengal,* Chronicle Books,2008

© RRIJM 2015, All Rights Reserved